राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 जुलाई 2020
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२१
युगाब्द-५१२१, अंक-१२८, वर्ष-१३
श्रावण विक्रमी २०७७ (जुलाई 2020)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

वयं जयेम त्वया युजा वृतमस्माकमंशमुदवा भरेभरे। अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज॥ –ऋ० १। ७। १४। ४

व्याख्यान–हे (इन्द्र) परमात्मन्! (त्वया युजा वयं जयेम) आपके साथ वर्त्तमान, आपके सहाय से हम लोग दुष्ट शत्रुओं को जीतें। कैसा है वह शत्रु ? कि (आवृतम्) हमारे बल से घिरा हुआ। हे महाराजाधिराजेश्वर! (भरे भरे अस्माकमंशमुदवा) युद्ध-युद्ध (प्रत्येक युद्ध) में हमारे 'अंश' (बल) सेना का (उदव)उत्कृष्ट रीति से कृपा करके रक्षण करो। जिससे किसी युद्ध क्षीण होके हम पराज्य को प्राप्त न हों। किन्तु जिनको आपका सहाय है, उनका सर्वत्र विजय ही होता है। हे (इन्द्र मघवन्) महाधनेश्वर! (शत्रूणां वृष्ण्या) हमारे शत्रुओं के [वृष्ण्या] वीर्य पराक्रमादि को (प्ररुज) प्रभग्न–रुग्ण करके नष्ट कर दे। (अस्मभ्यं वरिवः सुगं कृधि) हमारे लिए चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य धन को (सुगम्) सुख से प्राप्त कर। अर्थात् आपकी करुणा कटाक्ष से हमारा राज्य और धन सदा वृद्धि को प्राप्त हो ।।४३।।

सम्पादकीय

अपराधी, प्रशासन और सत्ता

उत्तर प्रदेश के कानपुर में घटी घटना बहुत कुछ सोचने पर विवश कर देती है। इसमें सबसे विचारणीय प्रश्न यही है कि किस प्रकार अपराधी, अपराधी को रोकने वाले और सारी व्यवस्थाओं को चलाने वाले अर्थात् राजनेता एक समूह के रूप में या यूं कहें कि एक परिवार के रूप में कार्य करते हैं। अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए एक दूसरे का सहयोग, एक दूसरे को बचाना तथा एक दूसरे का उपयोग-दुरुपयोग भी भली-भांति किया जाता है। हम यह भी देखते हैं कि व्यवस्था को बंधक बनाकर उसका दुरुपयोग करना, राष्ट्र के संसाधनों का अपने लिए उपयोग करना यह सब कार्य बड़े ही सलीके से एक परिवार की तरह से ये लोग चलाते हैं। इसमें हानि उठानी पड़ती है सामान्य जन को, देश की करोड़ों जनसंख्या को, जो परिश्रम करके इस देश को चलाने के लिए अपना खून पसीना बहाती है, सरकारों को टैक्स (कर) देती है और परिश्रम करके अपने परिवार का पालन पोषण करती है, चाहे उसमें देश का किसान हो, मजदूर हो, व्यापारी हो या मध्यम वर्ग का कोई व्यक्ति हो।

यह सब लोग मिलकर देश के संसाधनों का खूब दुरुपयोग कर सामान्य जन का शोषण कर अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए एक परिवार की तरह मिलकर काम करते रहते हैं। लेकिन जैसे परिवार में कई बार परस्पर में विवाद होता है, किसी सदस्य की महत्वाकांक्षा ज्यादा बढ़ जाती है तो विचित्र स्थिति उत्पन्न होती है और परिवार में ही सिर फुटव्वल हो जाता है लेकिन रहता फिर भी परिवार ही है। फिर मिल बैठकर मामले को सुलझा लेते हैं और यदि कोई ज्यादा ही इधर-उधर चलता है तो सब मिलकर के उसे ठिकाने भी लगा देते हैं और परिवार को बिखरने नहीं देते तथा फिर उसी प्रकार शांत होकर सामान्य जन के शोषण में लग जाते हैं। और जिन का शोषण हो रहा होता है वह इस परिवार की लड़ाई को देखकर खुश होते हैं और सोचते हैं कि अब हमें इस गठजोड़ से छुटकारा मिल जाएगा लेकिन स्थिति सुधरती नहीं है यह गठजोड़ इतना मजबूत है कि शोषण करने वाले शोषितों को खुश भी रखते हैं, बीच-बीच में उनको प्रसन्नता भी देते हैं, उनसे अपने लिए तालियां भी बजवाते हैं और उसी प्रकार से शोषण को भी जारी रखते हैं।

अगर हम कानपुर की ही घटना को देखें तो वहां पिछले 20-30 वर्ष से जिस अपराधी को जो लोग प्रश्रय दे रहे थे और

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष .... उससे अपने स्वार्थ की पूर्ति कर रहे थे, जब वही अपराधी उनसे बड़ा बनने का प्रयास करता है या अपनी हिस्सेदारी बढ़ाना चाहता है तो उसके द्वारा उठाए गए कदम सबके लिए हानिकारक हो जाते हैं और परिवार के सदस्य मिलकर उसका सफाया कर देते हैं। लोग खुश हो जाते हैं, सरकारों को वाहवाही देते हैं। उनकी यह समझ में ही नहीं आता है कि करने वाले वही, करवाने वाले वही, बिगाड़ने वाले वही, बिगड़ने वाले वही, यह तो उनके घर का मामला है हमें इससे कुछ मिलने वाला नहीं है हमारा शोषण पहले भी हो रहा था, हमारा शोषण आगे भी उसी प्रकार से होता रहेगा। वे लोग शोषण की उस प्रक्रिया को रुकने नहीं देते हैं और दुर्भाग्य ऊपर से यह है कि जिन लोगों का शोषण हो रहा है वह लोग उसी कानून की धाज्जियां उड़ते देखकर खुश होते रहते हैं जिस कानून से ही उन्हें थोड़ा बहुत बचाव का कहीं रास्ता मिल जाता है। इस प्रकार की घटनाएं और परिस्थितियां न तो लोकतंत्र के लिए अच्छी हैं, न ही समाज के लिए अच्छी हैं और न ही सामान्य जनों के लिए। विचार करें व्यवस्था को बिगाड़ने वाले यही लोग हैं, उस बिगड़ी हुई व्यवस्था में अपनी मनमर्जी से कार्य करने वाले भी यही लोग हैं, बिगड़ी हुई व्यवस्था को नकारने वाले भी यही लोग हैं। और उसी बिगड़ी हुई व्यवस्था को जब नकारा जाता है तो सामान्य जन बड़ा प्रसन्न होता है यह बड़े दुर्भाग्य की बात है। न केवल पुलिस वालों का मारा जाना व्यवस्था के तहत नहस होने को दर्शाता है अपितु अपराधी का इस प्रकार मारा जाना भी उसी व्यवस्था के तहस-नहस होने की ओर संकेत करता है अर्थात् जिन लोगों पर सामान्य लोगों के लिए व्यवस्था बनाकर रखने की जिम्मेवारी है वही लोग व्यवस्था को तोड़ते हैं और सामान्य जन उसमें भी प्रसन्नता का अनुभव करता है यही बड़ा दुर्भाग्य है। जो लोग आज व्यवस्था को तोड़कर लोगों को न्याय दिलाने की बात कर रहे हैं उन्हीं लोगों के द्वारा यह परिस्थितियां उत्पन्न की गई हैं जिससे कि सामान्य व्यक्ति का सरकार की व्यवस्थाओं पर से विश्वास उठ गया है। अच्छा तो तभी होता जब इस प्रकार के अपराधी को शुरुआत से ही यह व्यवस्थाएं सजा दिलवा पाती और उसको इस स्थिति तक पहुंचने ही ना देती, लेकिन तब इन्हीं के तुच्छ स्वार्थ आगे आ जाते हैं। कोई भी अपराधी दुर्दान्त बनने से पहले सामान्य अपराधों में ही संलिप्त होता है लेकिन अपराध रोकने वाले, व्यवस्था बनाने वाले, उन्हीं का दुरुपयोग अपने स्वार्थ के लिए करते हैं और उन्हें सामान्य से दुर्दान्त अपराधी बना देते हैं। इसलिए सामान्य जन के लिए हर तरफ यह चिंता का विषय है। सामान्य जन का शोषण तो दोनों ही परिस्थितियों में हो रहा है उस पर तो खतरा दोनों ही परिस्थितियों में है। वह तो अपराधियों से भी पीड़ित है और मनमर्जी से चलने वाली व्यवस्था से भी पीड़ित है। उसके लिए इसमें राहत की कोई बात नहीं। अपराधी, अपराध को रोकने वाले और व्यवस्था बनाने वाले सब लोगों ने अपराध का महिमामंडन इस प्रकार से किया की सारी व्यवस्थाएं टूटने पर भी लोग उसे उचित मान रहे हैं, कह रहे हैं कि न्याय का यही तरीका सही है। न्याय का यही तरीका सही है तो बाकी व्यवस्थाओं के नाम पर बेवकूफ बनाकर क्यों लूटा जाता है? अगर यही तरीका सही है इन्हीं लोगों के द्वारा जो दूसरी व्यवस्थाएं बनाई गई हैं वह किस लिए? अपराध प्रशासन और नेताओं की गठजोड़ से जो सामान्य जन का शोषण हो रहा है उसकी सुनने वाला अभी प्रशासन में भी कोई नहीं है। यह तो जब उन्हीं के ऊपर आन पड़ी तो इतना बड़ा निर्णय ले लिया गया अन्यथा अगर सामान्य 2-4 लोगों की हत्या कर दी जाती तो फिर किसी को कोई चिंता नहीं होती।

आर्यों, आर्याओं इस देश की जनता को जागरूक करने की आवश्यकता है जिससे वह विवेकपूर्ण ढंग से निर्णय ले सके और जो सही है उसे सही और जो गलत है उसे गलत समझ सके। ना केवल भाव में बहकर के अनुचित कार्यों को भी कभी इस तरफ से या कभी उस तरफ से महिमामंडित करते रहें और विवेक देने का कार्य आर्यों का है, विवेक आर्यों के सिद्धान्तों से आता है, वेद के सिद्धान्तों से आता है। जितना-जितना जन-जन में वह सिद्धान्त व्यापक होंगे उतना-उतना लोग विवेकशील होंगे और ठीक ढंग से निर्णय करने में सक्षम होंगे।

आज का प्रश्न

– आचार्य धर्मपाल, कुरुक्षेत्र

प्रश्न :- 'क्या प्रबल विचार शक्ति से व्यक्ति के दोष छूट सकते'?

उत्तर :- 'हां छूट सकते हैं यदि व्यक्ति का संकल्प दृढ़ हो। यह बात सत्य ही है कि आपके दोष स्वयं आप और ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं जानता इसीलिए दोषों को छोड़ने का उत्तरदायित्व आपका सबसे अधिक हो जाता है क्योंकि वे दोष आपके अपने हैं।'

दोष छोड़ने के लिए और आगे बढ़ने के लिए पुराने व्यक्तित्व पुराने विचार पुरानी मान्यताएं व पुराने संस्कारों को मारकर नया जन्म लेना पड़ता है।

जैसे बालक के नए-नए संस्कार बनते हैं उसी प्रकार दोष छोड़ने वाले व्यक्ति को भी अच्छे संस्कार बनाने पड़ते हैं।

एक बालक की तरह मन में तीव्र अनुकरण की शक्ति बनानी पड़ती है अर्थात जैसे बालक के अंदर नई बातों को सीखने की तीव्र इच्छा होती है वैसी ही तीव्र इच्छा गुण ग्रहण करने में होनी चाहिए।

तब मन शुद्ध होता है। पुराना व्यवहार, पुरानी भाषा, पुरानी मानसिकता को मार देना पड़ता है और विचारना पड़ता है कि ऐसा व्यवहार मैं दोबारा नहीं करूंगा अन्यथा उन्नति के पथ पर नहीं बढ़ सकता।

शुद्ध व्यवहार शुद्ध संस्कार की बात पर अधिकाधिक समय लगाना पड़ता है। इधर-उधर की बातें छोड़नी पड़ती हैं। ऐसी चर्चाएं बंद करनी पड़ती है। जिससे हंसी मजाक ठिठोली हो यदि आपकी वाणी में हास्यास्पद बातें अधिक हों तो समझना उन्नति के पथ में बाधक है। आपको दोष छोड़ना कठिन हो जाएगा।

दोष छूटने पर व्यक्ति को ऐसा अनुभव होता है कि जैसे मेरा नया जन्म हो गया हो।

चीन विजय कैसे?

आचार्य अशोक पाल, प्रवक्ता, आर्य महासंघ

सज्जनों! चीन भारत को चारों ओर से घेर रहा है, एक और पाकिस्तान, नेपाल जहां सीधे-सीधे उसकी मदद कर रहे हैं, वही दूसरे पड़ोसी देश बर्मा बांग्लादेश, श्रीलंका, और भूटान आदि भारत के साथ पूरे तरीके से खड़े दिखाई नहीं देते। यह चिन्तनीय विषय है कि एक भी सार्क देश हमारा समर्थन नहीं कर रहा है। ऐसे में चीन की विस्तारवादी नीति से हम किस प्रकार बच सकते हैं? हमें कौन बचा सकता है? सम्पूर्ण विजय के लिये हमें क्या नीति अपनानी होगी?

इस पर यह स्पष्ट है कि रक्षा कभी भी मात्र सामरिक शक्ति से नहीं होती। हाँ! हार जीत चलती रहती है, लेकिन वास्तविक हार मानसिक गुलामी की होती है। जैसे जापान के लोग द्वितीय विश्वयुद्ध में हार के बाद भी मानसिक गुलाम नहीं बने, जबकी जर्मन हार से आजतक उभर नहीं पाये हैं। हम कहीं चीन के गुलाम ना हो जायें, हम चीन के विचारों के गुलाम ना हो जायें। हम चीन के लोगों की तरह चमगादड़ खाने ना लग जायें इस पावन धरा को पशु-पक्षी विहीन न कर दें, मानव-मानव का शोषण न करे। ऐसी भावना हमारे नागरिकों से नहीं आनी चाहिए, पर यह कब संभव है? यह कैसे संभव है? लगता है चीनी डिजीटल, व्यवसायिक आक्रमण से पस्त हम भारतवासी वैचारिक हार की ओर बढ़ रहे हैं, अपने बालकों को चीनी कार्टूनों ने अपना दास बना लिया है। पहले अलिफ-लैला, फिर मैक्स-मूलर और अब शिंग-शैन, लगता है मानसिक गुलामी ही अपनी नियती है। पर क्या ऐसा हो सकता है कि हम अपनी वैचारिक स्वतंत्रता बनाये रख सकें और कम्यूनिस्टों के राज में त्राहिमाम-त्राहिमाम करते पशु-पक्षियों, चीनी आम आदमियों को बचा सकें? उन्हें मानवता का पाठ पढ़ा सकें? यदि हम इतिहास पर नजर डालते हैं तो पहले भी ऐसे अवसर आए हैं जब आक्रान्ताओं ने अपने मुण्ड उठाये हैं और उन्हें कुचलने के लिए हमारे पूर्वजों ने विशिष्ट विधि का प्रयोग किया, उन्होंने आक्रमणकारियों को न केवल सामरिक शक्ति से कुचला अपितु आक्रमणकारियों की पनाहगाह को मानवीय, प्राणीय आर्य-वैदिक विचारधारा से ओत-प्रोत कर दिया। महाराजा रामचंद्र जी और लक्ष्मण जी द्वारा श्रीलंका पर किया गया अनूठा प्रयोग, इसका ज्वलंत उदाहरण है। हाँ! कालांतर में आर्यसिद्धान्त अनभिज्ञता के कारण आक्रमणकारियों के साथ जहाँ तक हो सका सामरिक युद्ध को टालने का प्रयास किया गया, फिर भी अपने प्रचारक, सेकुलर ही सही, बौद्धिक स्तर पर आक्रमण हेतु चीन, श्रीलंका, दक्षिण एशिया, अरब तुर्क, यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया भेजने के पर्याप्त उदाहरण उपलब्ध हैं। आधे-अधूरे आर्य सत्यों को स्वीकार करने वाले समझौतावादी महात्मा बुद्ध के शिष्य सारे संसार में फैल गये। इस्लाम और ईसाइयत भी उन्हीं बौद्धिक फरिश्तों की देन हैं। उनके तुष्टिकरण में सम्मिलित था कि मांसाहारी भी बौद्ध हो सकते हैं। वास्तव में यह एक मतनिरपेक्षता थी, विश्व का यह प्रथम सेकुलर प्रयास था, इससे पूर्व आर्यों ने कभी सिद्दान्तों से समझौता नहीं किया था, यहां से अपनी वैचारिक हार की शुरुआत थी, जो बाद में सामरिक हार और शारीरिक, मानसिक गुलामी में बदल गई। आज चीन हमें डिजीटल अटैक से हमारे नागरिकों को मानसिक गुलाम बना चुका है। खैर! सेकुलरिज्म के कारण बौद्धों के स्वर्णिम काल में दूसरे देशों में हम आर्यवंशियों का प्रवेश तो हो गया, लेकिन जो सिद्धांत दिया जाना था, जो सिद्धांत वेद के विद्वान हमें बताते हैं, यम नियम का पालन करवाना था, वह हो ना पाया! वह हो ना सका! और पहले अर्द्ध-बौद्धिक इस्लाम, फिर ईसाइयत और 1962 के बाद एक बार फिर अर्द्ध-बौद्धिक, मानवता विनाशक, कम्युनिस्ट, माओवादी चीन अपने बौद्धिक गुरुओं पर आक्रमण के लिये आ रहा है। वह बौद्धगुरु दलाईलामा को पहले ही भूमिहीन कर चुका है और उसे आतंकवादी मानता है। हमने ही धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश में अपने सेकुलर प्रचारक को पनाह दे रखी है, जिसके अधीन कभी कैलाश मानसरोवर सहित सारा तिब्बत था। वही बौद्धप्रचारक आज आर्यभारत का पक्ष लेने की बजाये इसे भी तिब्बत की तरह बौद्धदेश बनाने पर तुले हैं जबकि वे जानते हैं कि बौद्धों की पलायनवादी, समझौतावादी नीति के कारण ही हम तिब्बत, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भूटान, श्रीलंका, बांग्लादेश, बर्मा से हाथ धो बैठे हैं।

इसीलिए आज हम सबको मिलकर विचार करना होगा कि चीन ही नहीं विश्व के प्रत्येक बौद्ध अर्थात अर्द्ध-आर्यदेश सहित सम्पूर्ण विश्व को आर्य विचारधारा से, वैदिक विचारधारा से ओत-प्रोत कैसे किया जा सकता है।वैसे इसका उदाहरण हमें पिछले लगभग 150 वर्षों के आर्य इतिहास में मिलता ही है कि ऋषि दयानंद ने स्पष्ट लिखा है कि परोपकारिणी सभा देश-देशांतर में आर्य प्रचारकों को भेजे और विश्व के प्रत्येक राष्ट्र को आर्य-वैदिक सिद्धांतों से परिचित कराये। यह कार्य बढ़ा, पर सफलता को प्राप्त नहीं हो पाया अन्यथा आज चीन के ग्राम-ग्राम में आर्य समाज होता। जब वहां मार्क्सवाद पैर जमा सकता है तो आर्यवाद क्यों नहीं? जब कहीं इस्लाम, ईसाइयत बढ़ सकती है तो आर्यत्व क्यों नहीं? अरे आर्यो! संसार पूर्ण मानवीय, प्राणी मात्र की रक्षा करने वाली आर्य संस्कृति, सभ्यता को अपनाना नहीं चाहता?

आइए हम बढ़ें, हम डटें, प्रत्येक देश को आर्यदेश बनायें। पर इसके लिए हमें आर्य समाज को मजबूत करना होगा, इसका शुद्धिकरण करना होगा। यदि आर्य समाज के शुद्धिकरण के अभियान को रोक दिया गया तो कभी यह अभियान सफल नहीं हो पाएगा। आज आर्यसमाज में घुस चुके विधर्मी आर्य शुद्धिकरण का ही विरोध आर्यसमाजियों के नाम पर करते हैं। फेक आर्यसमाज बना रखें हैं, जहां केवल मैरिज ब्यूरो आदि चलते हैं। फेक फेसबुक आई.डी. बना रखी हैं जो आर्यसमाज के शुद्धिकरण पर रोने, चीखने, चिल्लाने लगती हैं, मानों आसमान टूट पड़ा हो। ये आर्य सिद्धान्त प्रचार के विरोधी हैं, शुद्धिकरण के विरोधी हैं। इन्हीं के कारण ऋषि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, लेखराम, महाशय राजपाल मारे गये और हमने चूँ तक न की! इसीलिए विश्व के सभी ऋषिभक्त आर्यसमाजियों से आग्रह है कि वे आर्य समाज के सिद्धांतों को दृढ़ता पूर्वक अपनाएं, उन्हें अपने भीतर भर लें, आत्मसात करें। जब तक आर्यसिद्धान्त हम आर्यवंशियों, भारतीयों के भीतर कूट-कूटकर नहीं भरा जाएगा तब तक आर्य समाज विश्व विजय के लिए नहीं बढ़ सकता, कृण्वन्तो विश्वमार्यम के लिए नहीं कूच कर सकता। सरकार चीन की सामरिक हार सुनिश्चित करे। आर्यसमाज सामरिक विजय ही नहीं बौद्धिक विजय का परचम लहरायेगा क्योंकि हम आर्यों के मन में विदेशियों के प्रति किसी प्रकार की ईर्ष्या, द्वेष या लोभ-लालच की कोई बात नहीं है। हां! ऋषि दयानन्द के आदेशानुसार उन पर दया करते हुये उनके कल्याण का विचार अवश्य है। पर कल्याण वही कर सकते हैं जो दयानन्द के सिद्धांतों को जीवन में जीते हैं। आओ आर्य सिद्धांतों को जीते हुये आर्य सिद्धांतों से युक्त भारत के प्रत्येक जनमानस को करें। यही सफलता का मार्ग है। यही विश्व विजय का पथ है। इसी से हम आर्यों का और आर्य वंशियों का पथ प्रशस्त होगा। यहीं हमारे पूवजों का पुण्य पथ है ... चरैवेति.....।

शेष अगले पृष्ठ पर ....

सहज सरल सांख्य-२

-आर्य सतीश, दिल्ली

शास्त्र कहता है कि अविवेक का विच्छेद विवेक से उसी प्रकार हो जाता है जैसे अंधकार प्रकाश से दूर हो जाता है, लेकिन समाधिजन्य विवेक साक्षात्कार ही है अविवेक का उच्छेद करने में समर्थ है।

तो क्या देह, इन्द्रिय, पुत्र, कलत्रआदि में आत्माभिमान अर्थात् उनके साथ आत्मा का अविवेक हो जाना चाहिए, क्योंकि यह तो प्रकृति पुरुष का अविवेक नहीं है?

शास्त्रकार कहता है कि इन सब में जो अविवेक है वह प्रकृति पुरुष के कारण है, प्रकृति पुरुष का विवेक हो जाने पर उपरोक्त विवेक रह ही नहीं सकता।

आत्मा भिन्न और प्रकृति भिन्न है, ऐसा ज्ञान तो वृत्यात्मक प्रत्यक्षादि प्रमाणों से हो जाता है, तो फिर इस अवस्था में मोक्ष हो जाना चाहिए!

शास्त्रकार फिर कहता है- नहीं। यह विवेकज्ञान भी वाणी मात्र है, केवल कहने के लिए, यह केवल चित्त में रहता है। लेकिन जब आत्मा अपने स्वरूप का अवृत्तिक समाधि आदि में साक्षात्कार करता है उस अवस्था में अविवेक का नाश होकर मोक्ष या मुक्ति संभव है।

तो क्या शास्त्र श्रवण या गुरूपदेश मात्र जो प्रकृति और पुरुष के भेद को जानते हैं उसे मोक्ष का उपाय मान लेना चाहिए?

युक्ति, अनुमान अथवा शब्द श्रवण मात्र से जो ज्ञान होता है वह वस्तुभूत न होने से यह संभव नहीं, जैसे दिशा भ्रमित व्यक्ति का भ्रम युक्ति की अपेक्षा तब तक दूर नहीं होता जब तक स्वयं उसे उस स्थिति का साक्षात्कार अपरोक्ष ज्ञान न हो जाए।

तो क्या प्रकृति पुरुष के विवेक के लिए समस्त तत्वों को जानना आवश्यक है जिनसे भिन्न करके आत्मा को जानना है। परन्तु उनमें से अनेक तत्व ऐसे हैं जो इंद्रिय गोचर नहीं हैं।

शास्त्रकार कहता है इंद्रियगोचर तत्वों से उनके सहयोगी अतींद्रिय तत्वों का अनुमान हो जाता है जैसे धूम, आलोक अथवा उष्णता आदि से अग्नि का अनुमान।

तो फिर वे तत्व कौन से हैं जो जानना है?

सत्व, रजस्, तमस् - यह तीन प्रकार के मूल तत्व हैं। यह जब तक कारण रूप में हैं इनका नाम प्रकृति है। यह समस्त कार्य के कारण रूप हैं। जब यह साम्यावस्था से वैषम्य में आते हैं तो पहला परिणाम या कार्य जो है उसका नाम महत् है जिसे बुद्धि कहते हैं। महत् से अहंकार। अब आगे तमस् अहंकार से पाँच तन्मात्राएं व सात्विक अहंकार से दस बाह्य व एक आंतरिक इंद्रिय की उत्पत्ति होती है। तन्मात्र अथवा सूक्ष्म भूत से स्थूल भूत की उत्पत्ति होती है। बाह्य इंद्रियां दस हैं, पांच ज्ञानेंद्रियां तथा पांच कर्मेंद्रियां तथा आंतरिक इंद्रिय मन है। यह सभी विकार हैं आगे किसी तत्वान्तर को उत्पन्न नहीं करती। इनमें मूल प्रकृति केवल उपादान और महत् आदि 23 पदार्थ उसके विकार हैं। ये 24 अचेतन जगत है। चेतन पुरुष है - चेतन एक परमात्मा तथा अनेक जीवात्मा हैं। यह है वह समस्त तत्व जिन के वास्तविक स्वरूप को पहचान कर अचेतन तथा चेतन के भेद का साक्षात्कार करना है।

पांच स्थूल पृथ्व्यादि से 5 तन्मात्राओं का अनुमान होता है। कोई कण विश्लेषण जब इस अवस्था तक पहुंच जाए कि उसके अवयवों की प्रतीति न रहे वे ही अवयव अविशेष अथवा तन्मात्र कहलाते हैं।

इसी प्रकार तन्मात्रों की उपादान को जाना जा सकता है बाह्य व आभ्यांतर इंद्रियों के द्वारा तथा तन्मात्राओं के द्वारा अहंकार का अनुमान हो जाता है। यह सब कार्य अपने अस्तित्व से अपने उपादान कारण के अस्तित्व का अनुमान करा देते हैं और इसी प्रक्रिया अनुसार उस अहंकार से अंतः करण का अनुमान होता है जिसको मुख्यतः बुद्धि अथवा महत् के नाम से जाना जाता है। लेकिन सांख्यकार कहता है कि बुद्धि भी मूल तत्व नहीं है उससे प्रकृति का अनुमान होता है। प्रत्येक कार्य अपने उपादान कारण का अनुमान होता है। बुद्धि भी अपने मूल कारण प्रकृति का अनुमान कराती है। प्रकृति कार्यमात्र का उपादान है पर उसका अन्य कोई उपादान नहीं। प्रकृति के द्वारा किसी अन्य उपादान का अनुमान नहीं हो सकता।

प्रकृति तथा प्रकृति के समस्त परिणाम संहत हैं अर्थात् संघात रूप में हैं। एक तो परिणामी तत्व अपने लिए किसी प्रयोजन को सिद्ध नहीं करता, दूसरा परिणामी तत्व अचेतन है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है की परिणामी तत्व अपने से विलक्षण किसी अन्य तत्व के प्रयोजन सिद्धि के लिए अस्तित्व में है और यह अन्य तत्व का अनुमान कराता है जो निश्चित रूप से परिणामी तथा अचेतन नहीं होगा अर्थात कोई अपरिणामी चेतन तत्व है जिसके प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए समस्त परिणामी तत्वों का अस्तित्व है। इस कारण इनसे 'पर' अर्थात् विलक्षण पुरुष चेतन तत्व का अनुमान होता है। उस चेतन तत्व अर्थात् आत्मा का प्रयोजन है भोग और अपवर्ग। भोग को प्राकृत तत्व साक्षात उपलब्ध करवाते हैं और अपवर्ग की सिद्धि समाधि लाभ से आत्मसाक्षात्कार होने पर होती है। प्रकृति भोग्य है तथा उसका भोक्ता चेतन आत्मा।

लेकिन प्रश्न उठता है की जिस प्रकार कार्य का उपादान प्रकृति है प्रकृति का भी कोई अन्य उपादान क्यों स्वीकार्य नहीं है?

यदि साम्यावस्था प्रकृति का भी कोई मूल उपादान कारण माना जाए और आगे उसका भी अन्य कोई उपादान, तो इस कारण परंपरा का कहीं अवसान न होगा और यह एक अनवस्था दोष उत्पन्न हो जाएगा।

अब जिज्ञासु प्रश्न करता है कि यदि प्रकृति को परमात्मा का परिणाम मान लिया जाए तो क्या दोष है?

ऐसा करने पर भी कहीं तो रुकना होगा और यदि परमात्मा को ही उपादान मान लिया जाए तो फिर परमात्मा भी वही हो गया और केवल नाम का ही भेद रह गया, तो फिर प्रकृति को ही क्यों न मूल मान लिया जाए। दूसरा इससे परमात्मा भी परिणामी और अचेतन होगा और फिर दोनों में कोई अंतर नहीं रहेगा। अतः अनवस्था दोष से बचने के लिए प्रकृति को ही जगत का मूल उपादान माना गया है। वैसे भी कोई चेतन परिणामी नहीं हो सकता, अतः जगत की मूल उपादानता का कारण अचेतन प्रकृति में ही संभव है अन्यत्र नहीं।

अब यहां प्रश्न उठता है कि यह अवधारणा निश्चित हो जाने के बाद कि जगत का मूल कारण परिणामी अचेतन प्रकृति है और चेतन आत्मा है अपरिणामी है। तो फिर प्रत्येक जिज्ञासु को शास्त्र से एक समान ज्ञान प्राप्त क्यों नहीं होता?

ज्ञानग्राहकता के उत्तम, मध्यम तथा निकृष्ट स्तर होते हैं। अतः बुद्धि आदि ज्ञान साधनों की स्वच्छता, दृढ़ प्रयत्न, नियमित जीवन, पूर्व सुकृत आदि के अनुसार शीघ्र, विलंब तथा अति विलंब से प्राप्त होता है और प्रत्येक जिज्ञासु को उसका साक्षात्कार एक समान रूप में नहीं हो सकता।

साम्यावस्था प्रकृति का प्रथम कार्य महत् है जिसका स्वरूप मनन करना अर्थात् निश्चय करना है, इसीलिए इसका एक नाम बुद्धि है। **क्रमश ....**

गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-१२

-आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर,

जब कोई वस्तु अति कोमल हो तो उसे उतना ही अधिक धैर्य पूर्वक, सावधानी पूर्वक सहेजने की आवश्यकता होती है। साथ ही यदि वह वस्तु अति मूल्यवान वा अत्यन्त उपयोग की हो तो इस सावधानी, इस धैर्य की आवश्यकता और भी अधिक होती है। गृहस्थ जीवन में पति के लिए पत्नी का महत्त्व दर्शाने के लिए नीतिकारों का यह वाक्य पर्याप्त है- गृहण्यात् गृहमुच्यते।

कोई भवन गृहणी के होने पर ही घर बन पाता है। विद्वान ईंट पत्थरों आदि से बने भवनों को घर नहीं मानते हैं। ये दोनों परस्पर साथ बने रहें, सुखपूर्वक जीवन में उन्नति करें इसके लिए महत्वपूर्ण उपदेश ऋषियों ने संजोये हैं वैसा ही एक और उपदेश अपने घर पर यज्ञ करते हुवे वर, वधु को देता है और स्वयं भी ग्रहण करता है। मन्त्र-

ओं इह धृतिः स्वाहा। इदमिह धृत्यै इदं न मम॥
ओं इह स्वधृतिः स्वाहा। इदमिह स्वधृत्यै इदं न मम॥
ओं इह रन्तिः स्वाहा। इदमिह रन्त्यै इदं न मम॥
ओं इह रमस्व स्वाहा। इदमिह रमाय इदं न मम॥
ओं मयि धृतिः स्वाहा। इदमयि धृत्यै इदं न मम॥
ओं मयि स्वधृतिः स्वाहा। इदमयि स्वधृत्यै इदं न मम॥
ओं मयि रमः स्वाहा। इदमयि रमाय इदं न मम॥
ओं मयि रमस्व स्वाहा। इदमयि रमाय इदं न मम॥

दो भावों का विभिन्न प्रकार से उपयोग ऋषियों ने दर्शाया है। एक है धृति और दूसरा है- रमण। एक गृहस्थ व्यवहार का रक्षक है तो दूसरा आधार, आवश्यक दोनों ही हैं। दोनों में से किसी एक की भी न्यूनता होने पर निश्चित ही गृहस्थ संकट में पड जाता है।

धृति के तीन अर्थ मुख्य रूप से कोषकारों ने माने हैं धारण अर्थ में, तुष्टि आर्थ में, और धैर्य अर्थ में विवाह करके एक दूसरे को विशेष रूप से गृहस्थ में ले तो आये हैं परन्तु इतने मात्र से गृहस्थ नहीं चलना है अब दीर्घकाल तक एक दूसरे को धारण करना होगा। एक दूसरे को धारण करने से तात्पर्य गृहस्थ के व्यवहारों को धारण करने से है सभी व्यवहार उचित अनुचित का ध्यान रखते हुवे करने होंगे। कोई व्यवहार एक को अच्छा लगात है दूसरे को अच्छा नहीं लगता, एक को अमुक वस्तु भोजन में चाहिए दूसरे को अमुक वस्तु से चिढ़ है, एक बहुत अधिक बोलता है दूसरा बहुत कम बोलता है आदि-आदि अनेकों व्यवहारों को सहना होगा। स्वयं को संभालते हुवे दूसरे को भी संभालना है। इस पर भी बड़ी बात ये है कि इन सभी खट्टे-मीठे अनुभवों के बाद भी आपके पास गृहस्थ से असन्तुष्ट होने का अवसर नहीं है। अपितु आपको तुष्ट रहना है, सन्तुष्ट रहना सीखना है अर्थात् सन्तोष सीखना होगा। कैसे एक दूसरे से तुष्ट रहा जावे? यह प्रश्न बड़ा महत्वपूर्ण है। समाधान है एक दूसरे को समझना प्रथम तो परस्पर को मनुष्य मान यह ध्यान रखना कि प्रत्येक मनुष्य भावुक होता है भावना शील होता है। यह भावुकता न्यूनाधिक हो सकती है परन्तु ऐसा कोई मनुष्य नहीं होता जो भावनाओं से शून्य हो। अतः दूसरे की भावनाओं को ठेस लगे ऐसा व्यवहार परस्पर न करें। दूसरे यह ध्यान रखें कि मात्र संतुष्ट रहना ही नहीं अपितु एक दूसरे को सन्तुष्ट रखना भी है अतः यह जानने का प्रयत्न करना कि दूसरा हम से चाहता क्या है? जानकर विवेक पूर्वक उसे सन्तुष्ट करें। यह सन्तुष्टि एक दूसरे के प्रति विश्वास की वह भावना उत्पन्न करती है कि किसी के उकसाने पर भी पति-पत्नी परस्पर कभी एक दूसरे के विरूद्ध नहीं होते। धृति का तीसरा अर्थ है धैर्य। कर्त्तव्य पथ पर चलते हुवे धैर्य रूपी सहारे की लाठी होना अत्यन्त आवश्यक हैं, क्योंकि जब-जब धैर्य को छोड़कर मनुष्य जीवन पथ पर बढ़ता है तो प्रायः अधर्म ही को पुष्ट करता है। अपने कर्त्तव्य से गिर जाता है। और गृहस्थ तो सामाजिक सम्बन्धों की पाठशाला, उनका अभ्यास स्थल है यहाँ भी गिरने से बचने को धैर्य की लाठी का सहारा बार-बार लेना पडता है। यह धैर्य शीलता ही है जो हमें ठीक निर्णय करने के लिए विचारने का अवसर देती है। विचार कर निर्णय करने वाला ही अन्ततः बुद्धिमान सिद्ध होता है। अतः धृति नामक गुण गृहस्थों में होना ही चाहिए।

व्यवहार उपदेश का दूसरा भाव है रमण या रति। इसके भी प्रमुख तीन अर्थों को लेवें, आनन्द, भक्ति और प्रेम। यदि पति-पत्नी एक दूसरे को सन्तुष्ट रखते और सन्तुष्ट रहते हैं तो जीवन में आनन्द रहता है यह आनन्द, यह प्रसन्नता रति है। यह ऐसा आनन्द है जो और आनन्द पैदा करता है यही आनन्द एक दूसरे को परस्पर भक्त बनाता है। यह आनन्द और भक्ति प्रेम का वह रूप प्रकट करती है। जिसे अनेकों साहित्यकारों, कवियों ने लिखा और गाया है। यह प्रेम, अनुराग अथवा आकर्षण एक दूसरे को परस्पर बांधे रखता है। कुछ ऊँच-नीच हो जावे तो भी सम्बन्ध स्थाई बना रहता है। यह प्रेम ही आधार बनता है उन व्यवहारों का जिनसे पत्नी अपनी बात पति से मनवाती है और पति भी पत्नी से अपनी बात मनवा लेता है। इनकी सन्ताने कितनी उत्तम होंगी यह भी इन दोनों के इस प्रेम पर ही निर्भर करता है। माता-पिता की सेवा, सम्बन्धियों से व्यवहार आदि समस्त बातें इसी प्रेम से प्रभावित होती हैं। पति कामना करता है कि **'आनः प्रजां जनयतु'** हम जिन सन्तानों को उत्पन्न करें वे उत्तम गुण कर्म और स्वभाव से युक्त हों। साथ ही कामना करता है **'द्विपदे शं चतुष्पदे'** कि हमारे परिवार के माता-पिताादि व गौ आदि पशु भी सुख पावें। इन सबका सुख निर्भर करता हैं पत्नि और पति दोनों के धृति और रति पर अतः दोनों अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

क्रमश ....

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	20 जुलाई	दिन-सोमवार	मास-श्रावण	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-पुनर्वसु
पूर्णिमा	03 अगस्त	दिन-शुक्रवार	मास-श्रावण	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-उत्तराषाढ़ा
अमावस्या	19 अगस्त	दिन-बुधवार	मास-भाद्रपद	ऋतु-शरद	नक्षत्र-मघा
पूर्णिमा	02 सितम्बर	दिन-बुधवार	मास-भाद्रपद	ऋतु-शरद	नक्षत्र-शतभिषा

ईश्वर से प्रार्थना करने के लाभ

-आचार्य वर्चस्पति, हिसार

ऋषि दयानन्द ने प्रार्थना विषय पर अपने ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर विस्तार से लिखा है और प्रत्येक ग्रन्थ में ईश्वर से बार-बार प्रार्थना भी की है। सत्यार्थप्रकाश के अन्तिम में ऋषि दयानन्द लिखते हैं- **"प्रार्थना अर्थात् अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिये ईश्वर से याचना करना और इसका फल निरभिमान आदि होता है।"** प्रार्थना की इस परिभाषा से तीन बातों का परिज्ञान होता है, एक-पहले अपने सामर्थ्य का प्रयोग करके कार्य सिद्ध करने का प्रयत्न करना चाहिये। दो-ईश्वर से प्रार्थना करने पर विज्ञान आदि अवश्य प्राप्त होते हैं। तीन-प्रर्थना से अभिमान आदि दोष दूर हो जाते हैं।

सत्यार्थप्रकाश के अतिरिक्त ऋषि दयानन्द ने आर्योद्देश्यरत्नमाला ग्रन्थ में भी प्रार्थना की परिभाषा और प्रार्थना के लाभ लिखे हैं- **"अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिये परमेवर वा किसी सामर्थ्य वाले मनुष्य का सहाय लेने को प्रार्थना कहते हैं।"** और **"अभिमान-नाश, आत्मा में आर्द्रता, गुण-ग्रहण में पुरुषार्थ और अत्यन्त प्रीति का होना प्रार्थना का फल है।"** यहाँ ऋषि दयानन्द ने प्रार्थना के चार लाभ स्पष्ट रूप से बताये हैं। जो व्यक्ति ईश्वर से प्रार्थना नहीं करता, उसमें अभिमान रूपी दोष भरा होता है परिणामस्वरूप वह व्यक्ति अभिमान के कारण अपनी और दूसरों की हानि कर बैठता है। आर्य वही है जो ईश्वर के प्रति समर्पित होकर प्रार्थना के माध्यम से अपना अभिमान समाप्त कर लेता है।

अभिमान का नाश हो जाने पर आत्मा में आर्द्रता अर्थात् नम्रता, सरलता आ जाती है। सरल, नम्र व्यक्ति ही अच्छे गुणों को ग्रहण करने के लिये पुरुषार्थ करता है और ऐसे पुरुषार्थी व्यक्ति को ही परमेश्वर ज्ञान-विज्ञान प्रदान करता है। जब ईश्वर से ज्ञान-विज्ञान, आनन्द और बल आदि प्राप्त होता है तब आत्मा में ईश्वर के प्रति अत्यन्त प्रेम-प्रीति उत्पन्न हो जाती है। वह व्यक्ति ईश्वर का परम भक्त बन जाता है, ईश्वर की एक-एक आज्ञा का पालन करना वह अपना परम कर्त्तव्य समझने लगता है।

परन्तु आलस्य-प्रमाद के वशीभूत होकर ईश्वर से प्रार्थना कभी नहीं करनी चाहिये। ईश्वर आलसी के घर में भोजन बनाने, झाड़ू लगाने, वस्त्र धोने, खेती-बाड़ी करने या शत्रुओं से रक्षा करने के लिये नहीं आयेगा। ऋषि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं- **"जो परमेश्वर के भरोसे आलसी होकर बैठे रहते हैं वे महामूर्ख हैं क्योंकि जो परमेश्वर की पुरुषार्थ करने की आज्ञा है उसको जो कोई तोड़ेगा वह सुख कभी न पावेगा।"** यजुर्वेद में परमेश्वर आज्ञा देता है कि **मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त अर्थात् जब तक जीवे तब तक कर्म करता हुआ जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो।**

देखो! सृष्टि के अन्दर जितने भी सजीव और निर्जीव पदार्थ हैं वे सब गतिशील रहते हैं, सब अपने-अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं। चींटी हर क्षण प्रयत्न करती है, पृथ्वी सदा घूमती रहती है, वृक्ष आदि सदा घटते-बढ़ते रहते है। इन सब उदाहरणों से मनुष्यों को भी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जैसे **पुरुषार्थ करते हुए पुरुष का सहाय दूसरा भी करता है वैसे धर्म से पुरुषार्थी पुरुष का सहाय ईश्वर भी करता है।** जो पुरुषार्थ करने की मन में इच्छा भी नहीं करता, ऐसे आलसी और कायर का भला परमात्मा भी नहीं कर सकता।

जिस प्रर्थाना में सबका भला हो, सबका उपकार हो, केवल स्वार्थ के वशीभूत न हो उसी प्रार्थना को परमात्मा स्वीकार करता है। जिस प्रार्थना में दुष्टों का नाश और धर्मात्माओं की रक्षा की बात हो उस प्रार्थना में ईश्वर अवश्य सहायता करता है। संसार में पुरुषार्थ के साथ-साथ जिन लोगों ने ईश्वर से प्रार्थना की है उनके कार्य सिद्ध हुये हैं, आज भी सिद्ध हो रहे हैं और भविष्य में भी सिद्ध होंगे। आर्यों की यह परम्परा रही है कि रात-दिन पुरुषार्थ भी करना और साथ-साथ प्रात:-सायं ईश्वर से प्रार्थना भी करना। लेकिन महाभारत के समय से इस परम्परा में शिथिलता और अन्धविश्वास बढ़ता ही चला गया। **बहुत से नास्तिक हो गये जिन्होंने प्रार्थना करनी ही छोड़ दी और बहुत से केवल प्रार्थना को ही सब कुछ मान बैठे उन्होंने पुरुषार्थ छोड़ दिया।** प्रार्थना छोड़ने से दुर्योधन जैसे नास्तिकों में अभिमान, ईर्ष्या-द्वेष बहुत अधिक बढ़ गया और केवल प्रार्थना करने वालों में अन्धविश्वास ने जड़ें जमा ली। इन सबका परिणाम यह हुआ कि भयंकर विनाशकारी महाभारत के युद्ध में दुनिया के लाखों शूरवीर योद्धा आपस में कट-मरे। पाँच हजार वर्ष हो गये आज तक भी आर्य लोग उभर नहीं पाये।

महाभारत के पश्चात् तो प्रार्थना के नाम पर इस राष्ट्र का इतना नाश हुआ है कि लेखनी और वाणी व्यक्त करने में असमर्थतता अनुभव करती है। प्रार्थना के नाम पर ढोंग करने वालों ने ही सोमनाथ का मन्दिर लुटवाया था और यह देश एक हजार वर्ष तक गुलामों का भी गुलाम बना रहा। आज भी करोड़ों हिन्दू प्रार्थना के नाम पर भयंकर अन्धविश्वास और पाखण्ड में अपनी जिन्दगी बर्बाद कर रहे हैं। अलग-अलग देवतओं से अलग-अलग ढंग की प्रार्थना करते हुये लाखों अन्धभक्त मन्दिरों में मिल जाते हैं, कोई अपने देवता से बच्चे मांग रहा है, कोई अपने बच्चे के लिये दूसरे के बच्चे की बलि चढ़ा रहा है, कोई अपने भाई की कोर्ट में हार देखने के लिये प्रार्थना कर रहा है, कोई 10 लाख की रिश्वत देकर भी नौकरी की प्रार्थना कर रहा है। इनकी मूर्खता तो देखो! ये लोग भगवान को भी बुरे कर्मों में लिप्त करने का कितना बड़ा दुस्साहस कर रहे हैं। हिन्दुओं की मूर्खता पर दया भी आती है और बार-बार समझाने पर भी जब ये नहीं मानते तो क्रोध भी आता है। संसार में केवल आर्यसमाज ही इन हिन्दुओं का भला कर सकता है, अन्य कोई नहीं। प्रार्थना की ठीक-ठीक परिभाषा और प्रार्थना के ठीक-ठीक लाभ केवल आर्यसमाज ही इनको बता सकता है। दुर्भाग्य तो यह है कि आज आर्यसमाज की प्रतिनिधि सभायें और सार्वदेशिक सभा खण्ड-खण्ड हो चुकी हैं। ऐसी आपातकाल की स्थिति में राष्ट्रीय आर्य निमात्री सभा का गठन किया गया है। यह संस्था अब तक हजारों प्रशिक्षण सत्रों के माध्यम से लाखों हिन्दुओं को प्रार्थना की ठीक-ठीक परिभाषा समझा कर उनको आर्यत्व के मार्ग में आगे बढ़ा चुकी है। परिणाम स्वरूप लाखों युवक-युवतियाँ आज उपासना करने लग गये हैं, सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन उनकी दिनचर्या का अंग बन चुका है, दूसरे युवक-युवतियों को दो दिवसीय सत्रों में लाने के लिये वे रात-दिन संघर्ष करते हुये दिखाई देते हैं। यह सब देखकर राष्ट्र के उज्जवल भविष्य की किरण का आभास होता है।

गौकरुणानिधिः - गौ आदि पशुओं की रक्षा के लिये ऋषि का संदेश

ऋषि दयानन्द ने वेद के सिद्धान्तों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अन्य कार्यों के साथ-साथ एक पूर्णकालिक लेखक के रूप में भी अनेकों ग्रन्थों की रचना की है। उन्होंने विशुद्ध व्याकरण के ग्रन्थों से लेकर वेदभाष्य तक व सत्यार्थ प्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ से लेकर गायादि पशुओं की रक्षा व उपयोगिता के लिए गौकरुणानिधि जैसी सामान्य जन के लिए भी अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। ऋषि ने इस पुस्तक में गायादि पशुओं के पूरे अर्थशास्त्र को, उनकी उपयोगिता को दर्शाया है तथा समीक्षा भाग में मांसाहार व मद्यपान आदि की निस्सारता व हानियों को दर्शया हैं। वहीं दूसरी ओर नियमादि देकर कृषि तथा पशुओं की उन्नति का मार्ग प्रदर्शित किया है।

यहाँ प्रस्तुत है गौकरुणानिधि पुस्तक, आईये इसका स्वाध्याय करते हैं। ध्यान से पढ़ें तथा विचार करें कि यदि हम ऋषि के बताए अनुसार गायादि पशुओं की रक्षा करते हैं, उनका उपयोग लेते हैं तो न केवल पूरे राष्ट्र को अपितु एक एक व्यक्ति व एक एक परिवार स्मृद्धि को प्राप्त हो सकता है। यही मार्ग हमारी आर्थिक उन्नति का मूल है तथा इसको अपनाकर हम पाप से भी बच सकते हैं।

गतांक से आगे ... और ऊँटनी का दूध गाय और भैंस से भी अधिक होता है, तो भी इनके दूध के सदृश नहीं। ऊँट और ऊँटनी के गुण भार उठाकर शीघ्र पहुँचाने के लिए प्रशंसनीय हैं।

अब एक बकरी न्यून-से-न्यून एक और अधिक-से-अधिक पाँच सेर दूध देती है। इसका मध्यभाग प्रत्येक बकरी से तीन सेर दूध होता है। और न्यून-से-न्यून तीन महीने और अधिक-से-अधिक पाँच महीने तक दूध देती है। तो प्रत्येक बकरी के दूध देने में मध्यभाग चार महीने हुए। वह एक मास में २। सवा दो मन और चार मास में ९ नव मन होता है।

पूर्वोक्त प्रकारानुसार इस दूध से १८० एक सौ अस्सी मनुष्यों की तृप्ति होती है। और एक बकरी एक वर्ष में दो बार ब्याती है। इस हिसाब से एक वर्ष में एक बकरी के दूध के एक बार भोजन से ३६० तीन सौ साठ मनुष्यों की तृप्ति होती है। कोई बकरी न्यून-से-न्यून चार वर्ष और अधिक-से-अधिक ८ आठ वर्ष तक ब्याती है, इसका मध्यभाग ६ छह वर्ष हुआ। तो जन्म भरके दूध से २,१६० दो हजार एक सौ साठ मनुष्यों का एक बार के भोजन से पालन होता है।

अब उसके बच्चा-बच्ची मध्यभाग से २४ चौबीस हुए। क्योंकि कोई न्यून-से-न्यून एक और कोई अधिक-से-अधिक तीन बच्चों से ब्याती है। उनमें दो की अल्प मृत्यु समझो, रहे २२ बाईस। उनमें से १२ बकरियों के दूध से २५,९२० पच्चीस हज़ार नव सौ बीस मनुष्यों का एक दिन में पालन होता है। उसके पीढ़ी-पर-पीढ़ी के हिसाब लगाने से असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है और बकरे भी बोझ उठाने आदि प्रयोजनों में काम आते हैं, और बकरा-बकरी, भेड़-भेड़ी के ऊन के वस्त्रों से मनुष्यों को बड़े-बड़े सुख-लाभ होते हैं। यद्यपि भेड़ी का दूध बकरी के दूध से कुछ कम होता है, तथापि बकरी के दूध से उसके दूध में बल और घृत अधिक होता है। इसी प्रकार अन्य दूध देनेवाले पशुओं के दूध से भी अनेक प्रकार के सुख-लाभ होते हैं।

जैसे ऊँट-ऊँटनी से लाभ होते हैं, वैसे ही घोड़े-घोड़ी और हाथी आदि से अधिक कार्य सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार सुअर, कुत्ता, मुर्गा-मुर्गी और मोर आदि पक्षियों से भी अनेक उपकार होते हैं। जो पुरुष हिरन और सिंह आदि पशु और मोर आदि पक्षियों से भी उपकार लेना चाहें, तो ले सकते हैं। परन्तु सब का पालन उत्तरोत्तर समयानुकूल होवेगा। वर्त्तमान में परमोपकारक गौ की रक्षा में मुख्य तात्पर्य है।

दो ही प्रकार से मनुष्य आदि का प्राणरक्षण, जीवन, सुख, विद्या, बल और पुरुषार्थ आदि की वृद्धि होती है-एक अन्नपान, दूसरा आच्छादन। इनमें से प्रथम के विना मनुष्यादि का सर्वथा प्रलय, और दूसरे के विना अनेक प्रकार की पीड़ा होती है।

देखिए, जो पशु निःसार घास-तृण-पत्ते, फल-फूल आदि खावें, और सार दूध आदि अमृतरूपी रत्न देवें, हल गाड़ी में चलके अनेक विध अन्न आदि उत्पन्न कर, सबके बुद्धि, बल, पराक्रम को बढ़ाके नीरोगता करें, पुत्र-पुत्री और मित्र आदि के समान पुरुषों के साथ विश्वास और प्रेम करें, जहाँ बाँधे वहाँ बँधे रहें, जिधर चलावें उधर चलें, जहाँ से हटावें वहाँ से हट जावें, देखने और बुलाने पर समीप चले आवें, जब कभी व्याघ्रादि पशु वा मारनेवाले को देखें, अपनी रक्षा के लिए पालन करनेवाले के समीप दौड़कर आवें कि यह हमारी रक्षा करेगा। जिसके मरे पर चमड़ा भी कंटक आदि से रक्षा करे, जङ्गल में चरके अपने बच्चे और स्वामी के लिए दूध देने के नियत स्थान पर नियत समय पर चलें आवें, अपने स्वामी की रक्षा के लिए तन-मन लगावें, जिनका सर्वस्व राजा और प्रजा आदि मनुष्य के सुख के लिए है। इत्यादि शुभगुणयुक्त, सुखकारक पशुओं के गले छुरों से काटकर जो मनुष्य अपना पेट भर सब संसार की हानि करते हैं, क्या संसार में उनसे भी अधिक कोई विश्वासघाती, अनुपकारी, दुःख देनेवोले और पापीजन होंगे?

क्रमश ....

संध्या काल

श्रावण-मास, वर्षा-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077 (06 जुलाई 2020 से 3 अगस्त 2020)	भाद्रपद-मास, शरद-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077 (04 अगस्त 2020 से 2 सितम्बर 2020)
प्रातः कालः 5 बजकर 30 मिनट से (5.30 A.M.)	प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय कालः 7 बजकर 00 मिनट से (7.00 P.M.)	सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट–
www.aryanirmatrisabha.com
पर उपलब्ध है। अत: आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अत: पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक
www.aryanirmatrisabha.com/हिन्दी में पत्रिका
पर जाएं।

6 जुलाई– 3 अगस्त 2020 — श्रावण — ऋतु– वर्षा

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
उत्तराषाढ़ा कृष्ण प्रतिपदा 6 जुलाई	श्रवण कृष्ण द्वितीया 7 जुलाई	धनिष्ठा कृष्ण तृतीया 8 जुलाई	शतभिषा कृष्ण चतुर्थी 9 जुलाई	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण पंचमी 10 जुलाई	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण षष्ठी 11 जुलाई	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण सप्तमी 12 जुलाई
रेवती कृष्ण अष्टमी 13 जुलाई	अश्विनी कृष्ण नवमी 14 जुलाई	भरणी कृष्ण दशमी 15 जुलाई	कृत्तिका कृष्ण एकादशी 16 जुलाई	रोहिणी कृष्ण द्वादशी 17 जुलाई	मृगशिरा कृष्ण त्रयोदशी 18 जुलाई	आर्द्रा कृष्ण चतुर्दशी 19 जुलाई
पुनर्वसु कृष्ण अमावस्या 20 जुलाई	पुष्य शुक्ल प्रतिपदा 21 जुलाई	आश्लेषा शुक्ल द्वितीया 22 जुलाई	मघा शुक्ल तृतीया 23 जुलाई	पू॰ फाल्गुनी शुक्ल चतुर्थी 24 जुलाई	उ॰ फाल्गुनी शुक्ल पंचमी 25 जुलाई	हस्त शुक्ल षष्ठी 26 जुलाई
चित्रा शुक्ल सप्तमी/अष्टमी 27 जुलाई	स्वाति शुक्ल नवमी 28 जुलाई	विशाखा शुक्ल दशमी 29 जुलाई	अनुराधा शुक्ल एकादशी 30 जुलाई	ज्येष्ठा शुक्ल द्वादशी 31 जुलाई	मूल शुक्ल त्रयोदशी 1 अगस्त	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल चतुर्दशी 2 अगस्त
उत्तराषाढ़ा शुक्ल पूर्णिमा 3 अगस्त					उपाकर्म पर्व 3 अगस्त	

4 अगस्त– 2 सितम्बर 2020 — भाद्रपद — ऋतु– शरद

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
	श्रवण कृष्ण प्रतिपदा 4 अगस्त	धनिष्ठा कृष्ण द्वितीया 5 अगस्त	शतभिषा कृष्ण तृतीया 6 अगस्त	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण चतुर्थी 7 अगस्त	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण पंचमी 8 अगस्त	रेवती कृष्ण षष्ठी 9 अगस्त
अश्विनी कृष्ण षष्ठी 10 अगस्त	भरणी कृष्ण सप्तमी 11 अगस्त	कृत्तिका कृष्ण अष्टमी 12 अगस्त	रोहिणी कृष्ण नवमी 13 अगस्त	मृगशिरा कृष्ण दशमी 14 अगस्त	मृगशिरा कृष्ण एकादशी 15 अगस्त	आर्द्रा कृष्ण द्वादशी 16 अगस्त
पुनर्वसु/पुष्य कृष्ण त्रयोदशी 17 अगस्त	आश्लेषा कृष्ण चतुर्दशी 18 अगस्त	मघा कृष्ण अमावस्या/प्रतिपदा 19 अगस्त	पू॰ फाल्गुनी शुक्ल द्वितीया 20 अगस्त	उ॰ फाल्गुनी शुक्ल तृतीया 21 अगस्त	हस्त शुक्ल चतुर्थी 22 अगस्त	चित्रा शुक्ल पंचमी 23 अगस्त
स्वाति शुक्ल षष्ठी 24 अगस्त	विशाखा शुक्ल सप्तमी 25 अगस्त	अनुराधा शुक्ल अष्टमी 26 अगस्त	ज्येष्ठा शुक्ल नवमी 27 अगस्त	मूल शुक्ल दशमी 28 अगस्त	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल एकादशी 29 अगस्त	उत्तराषाढ़ा शुक्ल द्वादशी 30 अगस्त
श्रवण शुक्ल त्रयोदशी 31 अगस्त	धनिष्ठा शुक्ल चतुर्दशी 1 सितम्बर	शतभिषा शुक्ल पूर्णिमा 2 सितम्बर		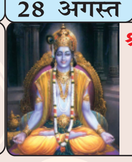	श्री कृष्णचन्द्र जयन्ती भाद्रपद कृष्ण अष्टमी 12 अगस्त	स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त

एक मूर्ति पूजक से वैदिक प्रवक्ता तक की यात्रा

–आर्य कृष्ण, निवाड़ी, गाजियाबाद

यह बात १० जनवरी २०१६ की है। हमारे पास के गाँव पेंगा में **'राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा'** द्वारा आर्य निर्माण सत्र का आयोजन किया गया। आदरणीय डॉ. ज्ञानबोध आर्य जी ने मुझे सत्र में चलने के लिए प्रेरित किया। (यद्यपि आदरणीय डॉक्टर साहब पिछले तीन वर्षों से मुझे इस सत्र के लिए निरंतर प्रेरित कर रहे थे, किंतु मैं बार-बार कोई ना कोई बहाना बनाकर अरुचि व अनिच्छा के कारण सत्र में नहीं बैठ पाया) अब २०१६ में आदरणीय डॉ साहब ने पुनः मुझे सत्र में चलने के लिए प्रेरित किया। ईश्वर कृपा हुई और मैं सत्र में पहुंचा। श्रद्धेय आचार्य श्री राजेश जी भूमिका सत्र ले रहे थे। मैं भूमिका में ही पहुंच गया। उनकी एक एक बात को बड़े ध्यान पूर्वक सुनता रहा। उसके बाद आर्य कौन? ईश्वर का अस्तित्व, आत्मा का अस्तित्व, धर्म, भूत-प्रेत, जादू-टोना, व्यसन, अर्थ, व्यापार, और अंत में राष्ट्र के विषय पर तो बिल्कुल मन को झकझोर कर रख दिया। कहां जी रहे हैं हम? कहां जा रहे हैं हम? कैसा जीवन हैं हमारा? हमारे पूर्वज कैसे थे? हम किस मार्ग पर बढ़ चले हैं? हमारी विद्या कैसी थी? कभी विचार ही नहीं किया था। दो दिन के सत्र की समाप्ति पर श्रद्धेय आचार्य जी ने यज्ञोपवीत कराया और सत्यार्थ प्रकाश भी प्रदान किया। क्योंकि मैं पूर्व में अध्यापन के कार्य से जुड़ा हुआ था पढ़ने-पढ़ाने में मेरी रुचि थी। इस सत्यार्थ प्रकाश को मैंने ६-६ घंटे तक निरंतर पड़ा। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन से मेरा मस्तिष्क घूम गया। अनेको प्रश्न स्वतः ही हल होते चले गए। अब जिज्ञासा और बढ़ी, प्रश्न भी उठे। आदरणीय डॉक्टर साहब से उनके समाधान लिए। आदरणीय डॉ ज्ञानबोध आर्य ने मेरा कुछ आचार्य गणों से परिचय करा दिया। उनसे अपनी शंकाओं का समाधान करता रहा। निरंतर सत्र जहां भी लगते मैं सभी सत्रों में उपस्थित होता। मैंने श्रद्धेय आचार्य श्री संजीव जी, श्रद्धेय आचार्य श्री हनुमत प्रसाद उपाध्याय जी, श्रद्धेय आचार्य श्री योगेश जी, श्रद्धेय आचार्य श्री सतीशजी, श्रद्धेय आचार्य श्री अशोक पाल जी, श्रद्धेय आचार्य श्री धर्मपाल जी, श्रद्धेय आचार्य श्री अवनीश जी श्रद्धेय आचार्य श्री अश्वनी जी श्रद्धेय आचार्य श्री वेद प्रकाश जी आदि आचार्य गणों के सत्रों में भाग लिया। वेद के सिद्धांतों के प्रति आस्था बढ़ती चली गयी।

अक्टूबर २०१६ में ही मुझे **'आर्य प्रचारक'** की कक्षा में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। **श्रद्धेय आचार्य श्री संजीव जी के मार्गदर्शन में मैंने आर्य प्रचारक की कक्षा पूर्ण की एवं आर्य प्रचारक की परीक्षा भी उत्तीर्ण की।** समय-समय पर मुख्य आचार्य श्रद्धेय श्री परमदेव मीमांसक जी का उत्साह, ऊर्जा एवं स्फूर्ति देने वाला प्रेरणादायक उद्‌बोधन भी प्राप्त होता रहा। जिससे निरंतर आर्य पथ पर बढ़ने, वेद के सिद्धांतों को आत्मसात करने की प्रेरणा मिलती रही।

नवंबर २०१७ में **'आर्य प्रवक्ता'** की कक्षा में प्रवेश करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। **श्रद्धेय आचार्य श्री जितेंद्र जी एवं श्रद्धेय आचार्य श्री हनुमत प्रसाद उपाध्याय जी के मार्गदर्शन में यह प्रवक्ता कक्षा पूर्ण हुई,** एवं सभी आचार्यों के मार्गदर्शन से और उनके आशीर्वाद से यह परीक्षा भी उत्तीर्ण की। आज स्वयं को **'राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा'** के समस्त आचार्यों का अत्यंत ऋणी अनुभव कर रहा हूं। अविद्या अज्ञान और पाखंड में डूबे हुए मुझे जैसे एक मूर्तिपूजक का, नास्तिक का **'राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा'** के विद्वान् आचार्यो ने वेद के सिद्धांतों से परिचय करा कर जीवन बदल दिया। एक नास्तिक से उन्होंने मुझे न केवल आस्तिक बनाया अपितु एक ईश्वर उपासक बनने के लिए प्रेरित किया, वेद के सिद्धांतों का जिज्ञासु बनाया, वेद के सिद्धांतों की रक्षा करना सिखया, राष्ट्र, समाज एवं प्राणी मात्र के हित का विचार करना सिखाया, वेद के सिद्धांतों का प्रचार करने वाला एक आर्य प्रचारक बनाया और समाज व राष्ट्र की वैदिक सिद्धांतो के द्वारा रक्षा करने वाला एक आर्य प्रवक्ता बना दिया।

धन्य है **'राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा'** के समस्त आचार्यगण जो दिन-रात मुझ जैसे अनेकों नास्तिकों को आस्तिक बनाने में लगे हुए हैं, और लाखों युवाओं को वेद विद्या देकर उनका जीवन बदल चुके हैं, और निरंतर वेद के सिद्धांतों की रक्षा कर राष्ट्र, समाज और इस संपूर्ण मनुष्य जाति का उपकार करने में लगे हुए हैं।

मैं **राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा'** के समस्त आचार्यगणों का, अपने प्रेरक आदरणीय डॉ ज्ञानबोध आर्य जी का एवं उन समस्त आर्य विद्वानों का आभार व्यक्त करता हूं जिन्होंने मुझे इस वेद पथ पर बढ़ने की प्रेरणा दी, मेरा मार्गदर्शन किया, और निरन्तर कर रहे हैं। आप सभी का पुनः पुनः कोटि-कोटि धन्यवाद।